

## मुसलमानों की परेशानी

डाक्टर जकारिया की परेशानी यह है कि वे मुस्लिम अस्मिता की रक्षा के प्रश्न को भारत तक सीमित समझ रहे हों और उनकी दृष्टि में भारतीय मुस्लिम समाज की मुख्य समस्या यह है कि वह कुल जनसंख्या का केवल १२ प्रतिशत है और विभाजन के कारण कमजोर हो गया है। दूसरा कारण उनकी दृष्टि में हिन्दत्व का उभार है। सत्ता की ताकत से लैस हिन्दत्व मुसलमानों को आर्थिक दृष्टि से उभरने नहीं दे रहा है, उनके प्रति भेदभाव बरत रहा है।

किन्तु एक अन्य मुस्लिम लेखक एम युसुफ खान ने जकारिया के इस आरोप को निराधार बताते हुए तीन मुस्लिम युवतियों एक पत्रकार, एक डाक्टर एवं एक उद्योगकर्मी से प्रत्यक्ष वार्तालाप के आधार पर लिखा है कि उनमें से किसी को भी कहीं भेदभाव का सामना नहीं करना पड़ा और वे अपनी योग्यता के आधार पर लगातार आगे बढ़ रही हैं। (पायनियर, १ जुलाई)

डाक्टर जकारिया जानते हुए भी अनजान बन रहे हों कि मुस्लिम अस्मिता का प्रश्न आज पूरे विश्वा के सामने मुह बाये खड़ा है। इस प्रश्न के तीन चेहरे सामने आते हैं।

एक, जिन गैरमुस्लिम देशों के किसी एक क्षेत्र में मुस्लिम बहुसंख्या है वे क्षेत्र गैरमुस्लिम देश से अलग होने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। पुराने यूगोस्लाविया के भीतर से बोस्निया और कोसावो का जन्म भारी खून-खराबे के साथ हुआ। सोवियत रूस के विघटन में से मध्य एशिया में ६ मुस्लिम राज्य प्रगट हुए। मुस्लिमबहुल चेचन्या गैरमुस्लिम रूस से मुक्ति के लिए खूनी जिहाद चला रहा है। फिलिपीन्स का खूनी मुस्लिमबहुल दक्षिणी भाग लम्बे समय से जिहाद में लिप्त है। चीन का सिंक्रांग प्रदेश मुस्लिमबहुल होने के कारण अशांति का गढ़ बना हुआ है। दूर क्या जाएं, अपने देश भारत में ही कश्मीर में क्या हो रहा है? १९९० से वहां के मुस्लिम बहुमत ने निजामे मुस्तफा अर्थात् इस्लामी शासन की स्थापना के लिए सहस्राब्दियों से कश्मीर के मूल हिन्दू निवासियों को बिना किसी उत्तेजना और अपराध के खूनी कत्लओम के द्वारा अपनी मातृभूमि छोड़ने के लिए विवश कर दिया है और वे आज केन्द्र में हिन्दू सरकारों के होते हुए भी शरणार्थी बनकर भटक रहे हैं। यह एक चेहरा है मुस्लिम अस्मिता का।

दूसरा चेहरा है जो मुस्लिम राज्या के भीतर दिखाई दे रहा है। प्रत्येक मुस्लिम देश के भीतर अपनी ही मुस्लिम सरकार के विरुद्ध चरमपंथी मुस्लिम आंदोलन चल रहे हैं- चाहे वह अल्जीरिया हो या मिस्र, चाहे ईरान हो या तुर्की या पाकिस्तान। चरमपंथियों की मांग

है कि उनके देश में शरीयत के आधार पर शासन चलाया जाना चाहिए। शरीयत का अर्थ है -कुरान, हदीस और सुन्ना पर आधारित शासन व्यवस्था। इस शासन व्यवस्था का नमूना सउदी अरब में देखने को मिल सकता है या कुछ वर्ष पूर्व अफगानिस्तान के तालिबान शासकों ने बामियान में दो हजार साल से बुद्ध प्रतिमाओं का ध्वंस करके प्रस्तुत किया था। उन प्रतिमाओं को तोड़ने का कोई तात्कालिक कारण न होते हुए भी तालिबान शासकों को उनका विध्वंस आवश्यक लगा, क्योंकि शरीयत की दृष्टि से देव प्रतिमाओं का अस्तित्व कुफ्र है और कुफ्र को मिटाना सच्चे इस्लाम का कर्तव्य है। सउदी अरब में अन्य धर्मावलम्बियों को अपनी धार्मिक श्रद्धाओं और प्रतीकों की सार्वजनिक अभिव्यक्ति की छूट नहीं है और वहां के नागरिकों से शरीयत का कड़ाई से पालन कराने के लिए मुताबा नामक नैतिक पुलिस की आंखें और डंडा हर जगह मौजूद है।

शरीयत के प्रति अंधश्रद्धा शरीयत के प्रति इस अंधश्रद्धा ने पूरे विश्वा को मुस्लिम और गैर-मुस्लिम में विभाजित कर दिया है। इसी को शरीयत की भाषा में मोमिन बनाम काफिर या जिम्मी कहा जाता है। इसी विभाजन में से राजनीतिक धरातल पर दारुल हरब और दारुल इस्लाम की अवधारणा पैदा हुई। दारुल हरब को दारुल इस्लाम में परिणत करना प्रत्येक मुसलमान का पवित्र कर्तव्य है। इस प्रयास का ही नाम है जिहाद। जिहादी तीन स्तरों पर काम करता है। एक है स्वयं को सच्चा मुसलमान बनाना अर्थात् शरीयत के सांचे में ढालना। दूसरा है काफिरों को इस्लाम कबूल करने के लिए प्रेरित या विवश करना, तीसरा है काफिरों या जिम्मियों के मजहबी युद्ध लड़ना, उन्हें इस्लाम के सामने पराजय स्वीकार करने के लिए मजबूर करना। यह विचारधारा कहीं भी मुसलमानों को गैर मुसलमानों के साथ शांति और सौहार्द के साथ जीने नहीं देती। मुस्लिम अस्मिता की रक्षा के लिए उसका मत परिवर्तन या विनाश पुण्य कर्म है। यह जुनून मुस्लिम युवकों में इतना गहरा व्याप्त है कि उसमें से सैकड़ों की संख्या में फिदायीन या आत्मघाती युवक पैदा हो रहे हों। किसी बड़े उद्देश्य के लिए अपने प्राणों की बलि देने के लिए तैयार रहना बहुत ऊँची स्थिति है और वन्दनीय है।

किन्तु बिना कारण के निर्दोष स्त्री-बच्चा की हत्या केवल इसलिए करना क्योंकि वे गैरमुस्लिम या काफिर हों, यह कौन सा पुण्य कर्म है? और इसके लिए आत्महत्या को कैसे वन्दनीय माना जाए? ऐसा तर्कहीन जुनून केवल अंध श्रद्धा में से ही पैदा हो सकता है। कुरान और हदीस के प्रति अंध श्रद्धा में से ही यह जुनून पैदा हो रहा है। गाजी बनना बड़ा पुण्य माना गया है। कुरान और हदीस के प्रति यह अंध श्रद्धा ही दूसरों के श्रद्धा केन्द्रों को ध्वस्त करने की, गैरमुस्लिम शासित प्रदेश से मुस्लिम शासित क्षेत्र में हिजरत (निष्क्रमण) करने और गैर-मुस्लिमों के विरुद्ध लगातार सशस्त्र युद्ध करने की प्रेरणा देती है। पैगम्बर मुहम्मद का स्वयं का जीवन प्रत्येक मुस्लिम के लिए प्रमाण है। उन्होंने ही

मक्का से मदीना को हिजरत का पहला उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने ही जीवनभर गैर-मुस्लिमों के विरुद्ध युद्ध लड़ने का खूनी अध्याय लिखा और उन्होंने ही सन् ६३० में मक्का पर अधिकार स्थापित होने के बाद बिना कारण काबा में स्थापित ३६० देव प्रतिमाओं का अपने हाथों अपने सामने विध्वंस किया। मुस्लिम मानसिकता की जड़ श्रद्धालुओं की सामूहिक मानसिकता का निर्माण कुछ फुटकर आयतों या शब्दों से नहीं होता अपितु श्रद्धा पुरुष के प्रत्यक्ष आचरण से होता है। यदि मुस्लिम सामूहिक मानसिकता की जड़ों को खोजने का प्रयास करेंगे तो उसके बीज कुरान और पैगम्बर मुहम्मद के जीवन में ही मिलेंगे। यही कारण है कि हजरत मुहम्मद की आंखें बंद होते ही खूनी हत्याओं का अध्याय लिखा जाने लगा। हजरत ने अपने जीवन काल में ही पराजितों की लूट के माल को अपने अनुयायियों में वितरित की परंपरा प्रारंभ कर दी थी।

उन्होंने अपने मुख्य प्रतिद्वन्द्वी अबू सूफियान की पुत्री से विवाह करके उसे अपने साथ जोड़ कर और मुस्लिम विचारक **अकबर अहमद (डि स्कवरिंग इस्लाम, २००३)** के अनुसार उसे लूट में से अन्या से अधिक अर्थात् ५३० ऊट देकर उपकृत किया जिससे उनके अन्य सहयोगियों के मन में ईर्ष्या भाव पैदा हुआ। अकबर अहमद लिखते हैं कि स्पेन को जीतने वाले अरब सेनापति ने स्पेन की ३०,००० सुन्दरियों को लूट में प्राप्त किया। उसने उत्तरी अफ्रीका में से ३०,००० बन्दियों को गुलाम बनाकर सैनिकों में वितरित कर दिया। उन्होंने विजित प्रदेशों में से लूटी गयी अपार धन-सम्पत्ति के भी आंकड़े दिए हैं। स्पष्ट ही, प्रारंभिक अरब विजयों में मजहबी जनून से अधिक सुन्दरियों, गुलामों और धन-सम्पत्ति की लूट में हिस्सा पाने का प्रलोभन भी काम कर रहा था। यही कारण है कि हजरत मुहम्मद के स्वर्गवास के कुछ ही वर्षों के भीतर तीन खलीफाओं की हत्याओं के दृश्य सामने आए। खलीफा उमर मोमिनों के बीच नमाज पढ़ते हुए कत्ल हुए तो अल बलादुरी के कथनानुसार उस्मान की प्राण रक्षा को कोई मोमिन आगे नहीं बढ़ा और उनकी लाश तीन दिन तक दफन का इन्तजार करती रही। खलीफा उस्मान और खलीफा अली की क्रूर हत्याएं हुईं।

यह विचारणीय है कि पहले चार खलीफाओं में से दो अर्थात् अबु बकर और हजरत उमर उनके श्वासुर थे तो शेष दो उस्मान और अली उनके सगे दामाद थे। पैगम्बर की मृत्यु के ३० वर्ष के भीतर ही ६६० में करबला का युद्ध हुआ जिसके द्वारा उत्पन्न शिया-सुन्नी विभाजन चौदह साल बाद भी आज तक जिन्दा है। इन युद्धों के पीछे कोई आध्यात्मिक विवाद नहीं दिखाई देता। यह पैगम्बर के दामाद अली और अबूसूफियान के परिवारों के बीच सत्ता का संघर्ष था। इस संघर्ष की परिणति उमय्यद और अब्बासी वंशों के शासन की स्थापना में हुई। इन वंशों के शासन के चरित्र पर अकबर अहमद ईरान की क्रांति के प्रणेता इमाम खुमैनी के शब्दों में प्रकाश डालते हैं। इमाम खुमैनी कहते हैं 'दुर्भाग्य से,

सच्चा इस्लाम अपने जन्म के बाद कुछ वर्षों तक ही जीवित रह सका। पहले उमय्यदों ने फिर अब्बासियों ने इस्लाम को सब तरह से नुकसान पहुंचाया बाद में ईरान के शासक भी इसी रास्ते पर चले। उन्होंने इस्लाम को पूरी तरह तोड़-मरोड़ कर उसकी जगह कुछ और ही बैठा का दिया। उमय्यदों ने निजामे मुस्तफा को आध्यात्मिक की जगह दुनियावी चरित्र दे दिया। उन्होंने शासन का आधार अरबवाद को बनाया जिसका अर्थ था अन्य लोगों के बजाय अरबों को बढ़ावा देने का सिद्धांत। यह सिद्धांत इस्लाम की मूल शिक्षा के एकदम प्रतिकूल था।

इस्लाम राष्ट्रीयता को मिटाने और पूरी मानव जाति को एक उम्मा या समुदाय में संगठित करने का आदर्श लेकर चलाया। इस्लामी राज्य को नस्ल और रंग से ऊपर उठकर काम करना था। किन्तु उमय्यदों ने इस्लाम को पूरी तरह तोड़-मरोड़ कर इस्लाम पूर्व जाहिलिया युग के अरबवाद को पुनरुज्जीवित कर दिया। और आज भी कुछ अरब देशों के नेता इसी नीति का अनुसरण कर रहे हैं। वे खुल्लमखुल्ला उमय्यदों के अरबवाद जो कि जाहिलिया के अरबवाद से भिन्न नहीं है वापस लाने की इच्छा प्रगट कर रहे हैं।'

**(इस्लाम एण्ड रिवोल्यूशन, १९८१ उद्धृत, अकबर अहमद पृ. ३०-३१)** इमाम खुमैनी ने इस्लाम का उम्मा अथवा एक मजहबी समुदाय का मुद्दा उठाया है। कुरान और हदीस पर आधारित इस्लामी विचारधारा ने भौगोलिक और नस्ली राष्ट्रवाद को अस्वीकार करके इस्लाम पर आधारित सामूहिक पहचान का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। इसी सिद्धांत में से खिलाफत की अवधारणा का जन्म हुआ, इस्लामी विचारधारा के अनुसार पूरे विश्वा के मुसलमान एक समुदाय हैं और खलीफा पैगंबर के प्रतिनिधि के नाते उनका एकमात्र मजहबी एवं लौकिक शासक है।

सैद्धांतिक धरातल पर एक उम्मा और एक खलीफा का सिद्धांत सन् १९२२ तक किसी न किसी रूप में जीवित रहा। सन् १२५८ में गैरमुस्लिम मंगोल नेता हलाकू खान ने बगदाद पर हमला करके खिलाफत को ध्वस्त कर दिया था किन्तु फिर ओटोमन शासकों ने उसे जिन्दा कर दिया। अन्ततः १९२२ में तुर्की के क्रांतिकारी नेता मुस्तफा कमाल पाशा ने खलीफा के पद को सदा सर्वदा के लिए समाप्त कर दिया। किन्तु कुरान और हदीस के प्रति श्रद्धा ने मुस्लिम मानस में सिद्धान्त रूप में उम्मा और खलीफा के आदर्श को जिन्दा रखा है। मध्यकाल तक विभिन्न देशों के मुस्लिम शासक खलीफा के नाम का खुतबा पढ़कर इस आदर्श के प्रति अपनी निष्ठा प्रगट करते थे। तुर्की के खलीफा से कोई सम्बंध न होते हुए भी भारतीय मुसलमानों ने खलीफा के प्रति ब्रिटिश दुर्व्यवहार से क्षब्ध होकर भारत में खिलाफत आन्दोलन चलाया। वे ब्रिटिश शासित दारुल हरब से अफगानिस्तान के दारुल को हजरत कर गए। आज भी मुस्लिम उम्मा की इस भावना से अभिभूत होने के

कारण ही कश्मीर, चेचन्या, अफगानिस्तान, बोस्निया आदि देशों में पूरे विश्वाभर से जिहादी पहुँचते हैं।

ओसामा बिन लादेन के अलकायदा का जाल विश्वाभर में फैला दिखायी देता है। जैसा कि डाक्टर जकारिया स्वयं भी स्वीकार करते हैं, आज विश्वा में अनेक स्वतंत्र मुस्लिम राज्य विद्यमान हैं जिनमें आपस में युद्ध एवं तनाव बने रहते हैं। अरबवाद का मुद्दा इमाम खुमैनी ने दूसरा महत्वपूर्ण मुद्दा उठाया है अरबवाद का। एक अन्य मुस्लिम नेता अनवर शेख ने इस विषय का गहरा अध्ययन करके निष्कर्ष निकाला है कि पैगम्बर मुहम्मद के नेतृत्व में सातवीं शताब्दी में जो क्रांति हुई थी, उसकी मुख्य प्रेरणा थी अरब राष्ट्रवाद। अरब प्रायद्वीप के बाहर इस्लाम की सैनिक विजयों को अरब राष्ट्रवाद का विस्तार ही कहा जा सकता है। मजहबी जनून, सैक्स, सम्पत्ति और भौतिक सुखों का अपूर्व सिम्मश्रण विद्यमान था।

जिस प्रकार हजरत मुहम्मद ने इस्लाम पूर्व अरब के इतिहास को बाहिलिया या अंधयुग घोषित कर दिया था उसी प्रकार विजयी अरब सेनाओं ने प्रत्येक पराजित देश को इस्लाम कबूल करने और अपने इस्लाम पूर्व इतिहास से सम्बंधविच्छेद करने के लिए बाध्य कर दिया। **नोबल पुरस्कार विजेता सर विद्यासागर नायपाल ने अपनी रचना 'बियोंड बिलीफ'** में मुस्लिम समाजों के प्रत्यक्ष अध्ययन अर विश्लेषण में पाया कि इस्लाम में मतान्तरित होने वाला व्यक्ति अपने इस्लाम पूर्व अतीत से पूरी तरह सम्बंध विच्छेद कर लेता है और उसके इस्लामीकरण का अर्थ अरबीकरण हो जाता है। भारत में समय-समय पर मुस्लिम समाज के भीतर जो सुधार आन्दोलन चले कभी **शेख अहमद सरहिन्दी** के नेतृत्व में कभी **शाह वाह अली उल्लाह** के नेतृत्व में। कभी **सैयद अहमद बरेलवी** के वाहाबी आंदोलन के नेतृत्व में। **इन सब आंदोलनों का एकमात्र लक्ष्य मतान्तरित मुसलमानों के पारिवारिक और सामाजिक जीवन में से हिन्दू रीति-रिवाजों और प्रतीकों की जगह अरबी-फारसी प्रतीकों को स्थापित करना था।** नामकरण में, वेशभूषा में, दाढ़ी और मूँछों की बनावट में और अरबी-फारसी या उनकी बेटाई उर्दू भाषा के प्रति लगाव में। **अभी तक इंडोनेशिया को इसके अपवाद के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। वहाँ के मुसलमान कहते थे कि हमने अपना मजहब बदला है, पूर्वज नहीं।** इसलिए इस्लामी पद्धति को भी उन्होंने नाम, वेशभूषा, भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में असंस्कृतिकरण की हवा बनाने का प्रयास हो रहा है। वहाँ भी नरम और गरम इस्लाम का टकराव आरंभ हो गया है। क्या इस प्रवृत्ति को रोकना आवश्यक नहीं?

बी एन शर्मा